Volume : 5 | Issue : 12 | December-2016 ISSN - 2250-1991 | IF : 5.215 | IC Value : 79.96

Original Research Paper हिंदी

हिंदी गद्य का विकास

डॉ.उत्तम पटेल

एसोसियेट प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्री वनराज आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर, जिला.वलसाड - 396050 (गुजरात)

ABSTRACT

ब्रजभाषा गद्य का प्रामाणिक रूप तो 17 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध की 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में मिलता है। आधुनिक काल के प्रारंभ से पहले अन्य भारतीय भाषाओं की तरह हिंदी भाषा में भी गद्य की रचनाएँ नहींवत् थीं। प्राचीन काल में साहित्य बहुत नगण्य-सा ही रहा है क्योंकि उस समय की ब्रजभाषा साहित्य की भाषा थी। लंबे समय तक साहित्य की रचना ब्रज में ही होती रहीं। काव्य की भाषा उस समय ब्रज थी किन्तु बोलचाल की भाषा गद्यात्मक थी। ब्रजभाषा के बोलचाल के रूप का प्रयोग उस समय की गद्यात्मक रचनाओं में होता था। जिनका हिंदी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है।

KEYWORDS ब्रजभाषा, गद्य-लेखन,खुसरो,प्रेमचंद।

आरंभिक गद्य लेखक का उद्देश्य अपना संदेश जनता तक पहुँचाने का था इसलिए उन्होंने जनसाधारण की ब्रजभाषा में गद्य लेखन किया। संवत् 1400 के आसपास गद्य-रचनाएँ होने लगी थीं। किन्तु ब्रजभाषा गद्य का प्रामाणिक रूप तो 17 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध की 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में मिलता है। इनमें वैष्णव भक्तों का महिमा व्यक्त करनेवाली कथाएँ हैं। इसी प्रकार संवत् 1660 के आसपास भक्त नाभादास रचित 'अष्टयाम' में ब्रजभाषा गद्य का जो रूप देखने मिलता है उसकी भाषा सामान्य बोलचाल की है, फिर भी कुछ अधिक परिमार्जित है। जैसे -"तब श्री महाराज कुमार प्रथम विशिष्ट महाराज के चरन छुइ प्रनाम करत भए। फिर ऊपर बृद्ध समाज तिनको प्रनाम करत भए। फिर राजाधिराज जू को जोहार करिकै श्री महेंद्रनाथ दशरथ जू निकट बैठते भए।"[1]

ब्रजभाषा ब्रज क्षेत्र की भाषा होने के कारण इसमें गद्य के विकास की कोई विकसित परंपरा नहीं मिलती। यही कारण है कि ब्रजभाषा काव्य की मुख्य भाषा बनी रही और बाद में खड़ीबोली ने गद्य का स्थान ले लिया। क्योंकि खड़ीबोली जनसाधारण के बोलचाल की भाषा थी। धीरे-धीरे साहित्य में इसका प्रयोग होने लगा और गद्य की रचनाएँ भी इसमें होने लगीं।

१४वीं शताब्दी में खड़ीबोली दिल्ली और उसके आसपास की भाषा थी। मुगलकाल में शासन की सुविधा तथा जनता से संपर्क के लिए खड़ीबोली का प्रयोग शुरू हुआ था। मुगलों की मातृभाषा फारसी थी। परिणाम स्वरूप उन्होंने फारसी मिश्रित खड़ीबोली का प्रयोग शुरू किया था। पढ़े-लिखे लोग इस मिश्रित रूप को फारसी में लिखने लगे थे। जिसे हिन्दुई, हिन्दवी, हिंदी, रेख्ता और आगे जाकर उर्दू नाम दिया गया। 14 वीं शताब्दी में अमीर खुसरो ने खड़ीबोली में पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखीं थीं। खुसरो की एक पहेली का उदाहरण इस प्रकार है-

"एक थाल मोती से भरा, सबके ऊपर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे।।"[2]

अमीर खुसरो के बाद खड़ी बोली का विकास दक्षिण के राज्यों में हुआ। जिसे 'दक्खिनी हिंदी' कहा गया। दक्खिनी हिंदी में अनेक साहित्यिक ग्रंथों की रचनाएँ हुई, जिनमें गद्य रचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। ख्वाजा बन्दा नवाज, गैसू दराज, शाह मीरां जी, बुरहानुद्दीन जानम और मुल्ला वजही जैसे साहित्यकारों ने काव्य के साथ गद्य ग्रंथ भी लिखे। मुल्ला वजही ने 1635 ई. में 'सब रस' नामक एक प्रसिद्ध ग्रंथ की रचना की थी। इसके बाद भी दक्खिनी हिंदी में लगातार गद्य का विकास होता रहा।

मुगल शासक औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल शासन टूटने लगा था। लखनऊ, पटना, मुर्शिदाबाद आदि पूर्वी शहर समृद्ध होने लगे थे परिणाम स्वरूप व्यापारी भी दिल्ली, आगरा आदि पश्चिमी शहरों को छोड़कर पूर्वी शहरों की ओर जाने लगे थे। खड़ी बोली तब तक संपर्क भाषा बन चुकी थी, इस कारण व्यापारियों के साथ वह भी विकसित होती रही। इस प्रकार खड़ी बोली में गद्य का विकास होने लगा।

खड़ी बोली गद्य का प्रामाणिक रूप मुगल बादशाह अकबर के दरबारी कवि गंग की रचना 'चंद छंद बरनन की महिमा' में देखने मिलता है। इसके बाद 1741 ई. में पटियाला दरबार के रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योग वसिष्ठ' लिखकर इस गद्य के विकास को आगे बढ़ाया था।[3]

इस प्रकार खड़ी बोली कम समय में ही साहित्य में स्थान पा गई और उसमें तेजी से गद्य का विकास हुआ। आज खड़ी बोली का जो रूप हमारे सामने है उसके विकास में ईसाई मिसनरियों, अंग्रेजों, समाज सुधारकों एवम् पत्र-पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है।

ईसाई प्रचारकों नें अपने धर्म के प्रचार के लिए जनता की भाषा में प्रचार शुरू किया था। उन्होंने हिंदी गद्य में प्रचार-पुस्तिकाओ एवम् 'बाइबिल' का हिंदी अनुवाद कर अपने धर्म-प्रचार को गति दी थी तो वहाँ प्रकारांतर से हिंदी गद्य के विकास को भी सहायता मिली थी। अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य को दृढ़ करने के लिए इसका प्रयोग किया था। ई.स. 1800 में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई थी। जिसमें 1824 से हिंदी पढ़ाई की व्यवस्था की गई थी। 1823 में स्थापित आगरा कॉलेज में भी हिंदी शिक्षा का प्रबंध किया गया था।

19वीं शताब्दी में शुरू हुए समाज-सुधार आंदोलन के नेताओं ने अपना संदेश जनता तक पहुँचाने के लिए जनता की भाषा में प्रचार-प्रसार प्रारंभ किया था। राजा राममोहन राय ने 'ब्रह्म समाज' की स्थापना द्वारा यह कार्य किया था। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' पुस्तक की रचना हिंदी गद्य में ही की थी। श्रद्धाराम फुलौरी तथा नवीन चंद्र राय ने भी समाज सुधार के लिए हिंदी गद्य का ही सहारा लिया था। श्रद्धाराम फुलौरी ने अपने प्रचार द्वारा ईसाई धर्म के प्रभाव को निस्तेज करने का प्रयास किया और धार्मिक और सामाजिक जागृति फैलाने का कार्य किया था। उन्होंने 'सत्यामृत प्रवाह', 'आत्म चिकित्सा', 'तत्वदीपक', 'धर्म-रक्षा', 'उपदेश संग्रह' आदि पुस्तकें लिखीं थीं और 'भाग्यवती' नामक एक सामाजिक उपन्यास भी लिखा था।

नवीनचंद्र राय ने बहुत-सी पुस्तकें तैयार करवायी थीं। 'ब्रह्मसमाज' के सिद्धांतों के प्रचार के उन्होंने समय-समय पर कई पत्रिकाएँ निकालीं थीं जिनमें 'ज्ञानदायिनी' उल्लेखनीय है।

ई.स.1826 में हिंदी का पहला समाचार पत्र 'उदंत मार्तण्ड' कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था। हिंदी का दूसरा समाचार पत्र 'बंगदूत' था। इसका प्रकाशन 8 मई 1829 को कलकत्ता से हुआ था। 1834 में 'प्रजामित्र' नामक तीसरा समाचार पत्र शुरू हुआ था। हिंदी भाषी प्रदेश से पहला समाचार पत्र 1844 में निकला था, इसका नाम था - 'बनारस'। इसे राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने निकाला था। 1846 में मौलवी नासिरूद्दीन ने 'मार्तण्ड' पत्र निकाला था। इस प्रकार 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में कई समाचार-पत्र प्रकाशित हुए थे। इसके बाद तो कई समाचार-पत्र प्रकाशित होने लगे, जिसने हिंदी गद्य को परिमार्जित किया।

1800 ई.स. में कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना हुई थी। 1803 में इस कॉलेज के अध्यापक जॉन ग्रिलक्राइस्ट ने हिंदी और उर्दू में पुस्तक लिखवाने का प्रयत्न किया था। इन्होंने कई मुंशियों की नियुक्ति की थी। भाषा मुंशियों में श्री लल्लू लालजी और सदल मिश्र ने हिंदी में गद्य की पुस्तकें लिखीं थीं। मुंशी सदासुखलाल ने 'सुखसागर' की रचना की थी। मुंशी इंशाअल्ला खाँ ने 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की थी। लल्लू लाल जी ने भागवत के दशम स्कंध की कथा के आधार पर 'प्रेमसागर' की रचना की थी। इसकी भाषा पर ब्रज का प्रभाव है। पं.सदल मिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' की रचना की थी।

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने 'राजा भोज का सपना', 'वीरसिंह का वृतांत', 'आलसियों का कोड़ा' आदि कहानियों की रचना की थी। राजा लक्ष्मणसिंह ने कालिदास के नाटक 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का 'शकुंतला नाटक' नाम से अनुवाद किया था।

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक आते-आते हिंदी गद्य का व्यापक व्यवहार होने लगा था। ऐसे समय में भारतेन्दु का आगमन हुआ जिनके प्रयासों से हिंदी गद्य को एक नयी दिशा प्राप्त हुई।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चंद्र मैगजीन' तथा 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' नामक पत्रिकाओं के माध्यम से गद्य के विकास में सहायता की थी। उन्होंने 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'प्रेम योगिनी', 'विषस्य विषमोषधम', 'श्री चंद्रावली नाटिका', 'भारत दुर्दशा', 'नील देवी', 'अंधेर नगरी' आदि नाटक लिखे। इस काल में भारतेन्दु ने लेखकों को लेखन के लिए प्रेरित भी किया। प्रताप नारायण मिश्र ने 'भारतदुर्दशा', 'कलि कौतुक रूपक', 'हठी हमीर'

नाटकों के अतिरिक्त निबंध भी लिखे। बालकृष्ण भट्ट 1934 में 'हिंदी प्रदीप' नामक पत्रिका निकाली थी। इनके अतिरिक्त उन्होंने 'पद्मावती, 'शिशुपालवध आदि नाटक व 'सौ अजान एक सुजान, 'नूतन ब्रह्मचारी' नामक उपन्यास तथा ललित निबंध भी लिखे थे। बद्री नारायण चौधरी 'प्रेमघन ' ने 'भारत सौभाग्य' एवम् 'वीरांगना रहस्य' नामक नाटक लिखे थे। बालमुकुन्द गुप्त ने निबंध लेखन द्वारा हिंदी गद्य को समृद्ध किया था। उनका 'शिवशंभु के चिट्ठे' प्रसिद्ध रचना है। श्रीनिवास दास ने 'परीक्षा गुरू' नाम से हिंदी को पहला उपन्यास दिया है। राधाकृष्ण दास का 'निस्सहाय हिन्दू' उपन्यास प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त उन्होंने 'दुःखिनी बाला', 'सती प्रताप', 'महारानी पद्मावती' आदि नाटकों की रचना की थी।

इस प्रकार भारतेन्दु मंडली के लेखकों ने नाटक, उपन्यास, निबंध आदि की रचना की थी जिससे हिंदी गद्य के विकास को बल मिला था। भारतेन्दु काल में जहाँ हिंदी गद्य का साहित्यिक संस्कार हुआ, वहीं गद्य की कई विधाओं का श्रीगणेश भी हुआ। भारतेन्दु काल में गद्य की भाषा खड़ी बोली ही रही, किन्तु काव्य की भाषा ब्रज ही बनी रही। जबकि द्विवेदी काल में गद्य-पद्य दोनों की भाषा खड़ी बोली हो गई थी।

द्विवेदी काल में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिंदी गद्य के विकास में ही नहीं, आधुनिक हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में भी अप्रतिम योगदान दिया। आचार्य द्विवेदी ने 'सरस्वती' के लिए आने वाली रचनाओं की भाषाओं का परिमार्जन करके भाषा को एकरूप किया। 'सरस्वती' के माध्यम से प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, बालमुकुन्द गुप्त, नाथूराम शर्मा, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामचंद्र शुक्ल, पद्मसिंह शर्मा आदि लेखकों को ख्याति मिली।

इस युग में गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे उपन्यास, कहानी, निबंध और आलोचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम हुआ। उपन्यास के क्षेत्र में देवकीनंदन खत्री ने 'चंद्रकांता' और 'चंद्रकांता संतति', किशोरीलाल गोस्वामी ने 'चपला, तारा', 'तरुण तपस्विनी', 'रजिया बेगम', 'लीलावती', 'लवंगलता', अयोध्यासिंह उपाध्याय ने 'ठेठ हिंदी का ठाठ' और 'अधखिला फूल', लज्जाराम मेहता ने 'हिंदू गहस्थ', 'आदर्श दंपति' आदि उपन्यासों द्वारा तो चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी', विश्वंभरनाथ शर्मा, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री आदि ने कहानीकारों ने अपना योगदान दिया है।

इसी काल के प्रमुख निबंधकार हैं- आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त, सरदार पूर्णसिंह, श्यामसुंदर दास, बाबू गुलाब राय, 'गुलेरी' और आचार्य रामचंद्र शुक्ल। मिश्रबंधु, श्यामसुंदर दास, पद्मसिंह शर्मा, बाबू गुलाब राय आदि ने व्यावहारिक समीक्षा को समृद्ध बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया तो समीक्षा के क्षेत्र में युगांतकारी कार्य आचार्य शुक्ल ने किया।

इस युग के बाद गद्य साहित्य जिन साहित्यकारों ने समृद्ध किया उनमें प्रेमचंद का नाम अविस्मरणीय है। प्रेमचंद ने 'निर्मला', 'प्रतिज्ञा', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', 'सेवासदन', 'गबन', 'गोदान' आदि प्रसिद्ध उपन्यासों द्वारा हिंदी गद्य को नयी दिशा दी। इनके अतिरिक्त प्रसाद, चतुरसेन शास्त्री, गुरूदत्त, भगवतीचरण वर्मा, अश्क, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, नागार्जुन, फणीश्वरनाथ 'रेणु, ' अमृतलाल नागर आदि उपन्यासकार उल्लेखनीय हैं। कहानीकारों में प्रेमचंद के अतिरिक्त प्रसाद, गुलेरी, सुदर्शन, यशपाल,जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, मोहन राकेश, रोजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

नाटककारों में जयशंकर प्रसाद, जगदीशचंद्र माथुर, मोहन राकेश, हरिकृष्ण प्रेमी, उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र, सेठ गोविंददास, लक्ष्मीनारायण लाल, विष्णु प्रभाकर आदि उल्लेखनीय हैं। निबंधकारों के रूप में इस काल में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ.नगेन्द्र, विद्यानिवास मिश्र, आचार्य शुक्ल, नंददुलारे वाजपेयी आदि ने उल्लेखनीय योगदान दिया।

निबंध के समान आचार्य शुकल ने आलोचना के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूण कार्य किया। शुक्ल के बाद हिंदी आलोचना को विकसित करने वालों में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, डॉ.नगेन्द्र, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ.देवराज, डॉ.रामविलास शर्मा, शिवदानसिंह चौहान, प्रकाशचंद्र गुप्त, डॉ.नामवर सिंह आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

निष्कर्ष- प्रेमचंद और उनके बाद के साहित्य पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि युगीन परिस्थितियों का प्रभाव इस समय के साहित्य पर पड़ा है। देश की राजनीतिक परिस्थितियों तथा अंतर्राष्ट्रीय जगत में हो रहे परिवर्तनों का प्रभाव भी साहित्यकारों पर पड़ा। रूस में साम्यवाद का उदय हुआ, जिसके परिणाम स्वरूप हिंदी साहित्य में प्रगतिवाद का आगमन हुआ। 1947 में हमारा देश आजाद हुआ, इस राजनीतिक परिवर्तन ने साहित्य पर काफी प्रभाव डाला। दूसरी ओर पश्चिम में जो वैज्ञानिक प्रगति हो रही थी, उसका आगमन भारत में हुआ। नयी तकनीक की उन्नति से साहित्य में नयी विधाओं का जन्म होने लगा। रेल, प्रेस, बिजली, तार, रेडियो आदि ने साहित्य क्षेत्र में नयी विधाओं के विस्तार में सहायता पहुँचायी। जिसके कारण यात्रा-वृत्त, डायरी, जीवनी, आत्मकथा, रिपोतार्ज आदि नवीन विधाओं में लेखन कार्य शुरू हुआ।

संदर्भ-संकेत-

1. शुक्ल, रामचंद्र (२०१६),हिंदी साहित्य का इतिहास पृ.३४८,ज्ञान विज्ञान एजूकेयर, नई दिल्ली http://www.ignca.nic.in/coilnet/amir0012.htm
2. निरंजनी, रामप्रसाद, भाषा योग वसिष्ठ, भाग-१,पृ.१८, http://www.new.dli.ernet.in/handle/2015/342042